समाधान

व्यक्ति और समाज एक दुसरें के पूरक होते है और नियंत्रक भी। व्यक्तियो से ही समाज का अस्तित्व होता है। बिना व्यक्तियो के जुडे समाज बनता ही नही। समाज के बिना भी व्यक्ति का जीना कठिन हो जाता है क्योकि सुचारू जीवन के लिये जिस व्यवस्था की आवश्यकता होती है वह समाज ही दे सकता है, कोई और नही।

व्यक्ति दो प्रकार के होते है 1. वे जो स्वत ठीक ठीक आचरण करते है और दूसरो को ठीक ठीक आचरण करने मे सहायता करते है। ऐसे व्यक्तियो को ही सामाजिक कहा जाता है 2. दूसरे वे होते है जो लगातार दुसरो का शोशण भी करते रहते है और अत्याचार भी। ऐसे व्यक्तियो को ही समाज विरोधी कहा जाता है। कुछ लोग इन दोनो ही श्रेणियो मे नही होते। ये न तो स्वयं अपराध करने के अभ्यस्त होते है न ही समाज की मदद करते है। कभी कभार कोई साधारण सा अपराध कर लेनेया दूसरो की सहायता कर देने वाले व्यक्तियो को असामाजिक माना जाता है। इन्हे अच्छा व्यक्ति न मानते हुये भी समाज विरोधी न होने के कारण समाज का ही अंग माना जाता है। यदि हम भारत स्थित समाज का आकलंन करे तो यहॉ की कुल आबादी मे एक दो प्रतिशत ही समाज विरोधी तत्व मिलते है। शेश समाज मे कुछ लोग सामाजिक प्रकृति के होते है तो अधिकाश असामाजिक प्रक्ति के । होते हैं ये दोनो ही समाज के अंग । विश्व के अन्य देशो मे परिस्थिति अनुसार यह प्रतिशत बदलता रहता है।

समाज विरोधी व्यक्तियो से सामाजिक व्यक्तियो की सुरक्षा की चिन्ता समाज ही करता है। समाज द्धारा सुरक्षा और न्याय के लिये एक विशेश सेल बनाया जाता है जिसे सरकार कहते है। सरकार का यही दायित्व होता है कि वह ऐसी सुरक्षा और न्याय की गांरटी प्रदान करे। यदि हम भारत मे सामाजिक व्यक्ति की स्थिति का आंलकन करे तो उसकी भौतिक सुख सुविधाओ मे काफी वृद्धि हुई है । सडक, पानी, बिजली शिक्षा,स्वास्थ्य आदि मे पर्याप्त सुधार हुआ है किंतु सुरक्षा और न्याय के मामले मे सामाजिक व्यक्ति बेहद कमजोर हुआ है । इन मामलो मे भारतीय शासन व्यवस्था पूरी तरह असफल हो गई है। भारत मे समाजविरोधी तत्व मजबूत और सामाजिक व्यक्ति संकट ग्रस्त है । यदि हम पूरे विश्व का आलकन करे तो पूरे विश्व की हालत भारत जैसी तो नही है किन्तु पूरे विश्व मे भी कुछ अंशो मे भारत जैसी हालत बन रही है।पूरी दुनिया मे भौतिक उन्नति हो रही है किन्तु सुरक्षा और न्याय कमजोर हो रहे है । आम लोगो का चरित्र गिर रहा है । आतंकवाद बढ रहा है सामाजिक व्यक्तियो का मनोबल टूट रहा है और समाज विरोधियो का बढ रहा हैा राज्य व्यवस्था असफल होती जा रही है । ऐसी स्थिति किसी क्षेत्र विशेश की होती तो कोइ बात नही होती किन्तु यदि पूरे विश्व मे ऐसा है तो संकट राज्य का न होकर समाज का मानने की आवश्यकता है।

स्पश्ट है कि यह सामाजिक सोच का विशय है । समाज के समक्ष संकट कितना गहरा है उसके लक्षण क्या है तथा उसकी पहचान क्या है यह गंभीर शोध का विशय है । ये लक्षण नौ मानेजाते है।

KASHI INDIA

1. जब निश्कर्श निकालने मे विचार मंथन की जगह प्रचार अधिक प्रभाव कारी हो जावेंः–निश्कर्श निकालने का सर्वश्रेश्ठ माध्यम है विचार और विचारो को ठीक दिशा देने का आधार है विचार मंथन। बहुत प्रचीन काल मे सामाजिक विशयो पर भी निश्कर्श निकालने मे विचार मंथन की अग्रणी भूमिका रही है । नितान्त पारिवारिक या व्यक्तिगत मामलो मे भी रही है । आज भी इस प्रणाली की उपयोगिता अमेरिकन राश्टपति चुनाव मे देखी जा सकती है । किन्तु सम्पूर्ण विश्व मे निश्कर्श निकालने मे विचार मंथन की प्रकिया समाप्त हो रही है और विचारो का स्थान भावनाये ले रही है । विचार निश्कर्श निकालता है मंथन के माध्यम से और भावनाएॅ निश्कर्श निकालती है प्रचार से प्रभावित होकर । पूरे विश्व मे तेंजी से विचार मंथन का स्थान विचार प्रचार ने ग्रहण कर लिया है । पिछले दो तीन हजार सालो से यह बीमारी शुरू हुई और अब तो इसने महामारी का रूप धारण कर लिया है । मृत महापुरूशो के विचार बिना स्वय मंथन किये ही यथावत समाज तक पहुचाने की धातक परंपरा निंरतर फल फूल रही है । नित नये नये संगठन बन रहे है। आधुनिक भारतीय महापुरूशो के रूप मे जिन स्वामी दयानन्द, महात्मा गाधी या श्री राम जी शर्मा ने अपना सम्वूर्ण निश्कर्श विचार मंथन प्रकिया से निकाला था उन्ही के शिश्यो ने विचार मंथन की प्रकिया कोत्याग कर सिर्फ विचार प्रचार को ही अपना उदेश्य मान लिया है। ये लोग नही सोचते कि निश्कर्श निकालने और उन्हे क्रियान्वित करने मे देश काल परिस्थिति की भी भूमिका हुआ करती है। यदि वे महापुरूश जीवित रहते तो देश काल परिस्थिति अनुसार अपने निश्कर्श की समीक्षा भी करते और संशोधन भी किन्तु उनके जाते ही हम विचार मंथन को रोककर सिर्फ प्रचार मे लग जाते है। विदेश आधारित संगठनो मे इस्लाम ने सदा के लिये इस पंरपरा पर रोक ही लगा दी है, इसाइयत मे भी यह पंरपरा आंशिक ही है। एकमात्र मार्क्सवादी ही ऐसे है जो इस पंरपरा को जीवित रखे है यधपि उनमे भी यह पंरपरा आन्तरिक संगठन तक ही सीमित है, सामाजिक विशयो पर नही।

इस धातक पंरपरा का बहुत अधिक नुकसान समाज व्यवस्था को भुगतना पड रहा है । नये नये गंभीर विचार सामने नही आ पा रहे। प्रचार माध्यम से प्रभावित करने के लाभ से सब लोग आकर्शित है। प्रचार के नये नये तरीके खोजे जा रहे है। असत्य भी प्रचार के माध्यम से सत्य के समान स्थापित होने लगे है।नये नये संगठन बनने की होड मची हुई है। प्रचार दौड मे चरित्र की कोइ आवश्यकता ही नही समझी जारही है । अंधी दौड मे अधिक से अधिक लोगो को आंख पर पट्टी बांधने हेतु प्रेरित करने की होड मची है जबकि उन्ही महापुरूशो ने अपने जीवन काल मे समाज को लगातार पट्टी न बाधने की शिक्षा दी थी।

2. संचालक और संचालित के बीच बढतीदूरी– समाज की ठीक ठीक व्यवस्था के लिये प्रत्येक व्यक्ति मे भावना और बुद्धि का समन्वय आवश्यक होता है। यदि बुद्धि की मात्रा अधिक हो जावे तो वह धूर्तता का मार्ग पकड लेती है और यदि भावना बहुत हो जावे तो मूर्खता मे बदल जाती है। इन दोनो के समन्वय का अभाव हो गया है। यही कारण है कि समाज मे संचालक और संचालित के बीच की दूरी लगातार बढती जा रही है। इन्हे अंग्रजी मे मोटीवेटर और मोटीवेटेंड के रूप मे भी

KASHINDIA

कहा जाता है। यह दूरी लगातार राजनैतिक क्षेत्र मे भी बढ रही है और धार्मिक क्षेत्र मे भी। हर संचालक पूरा पूरा प्रयत्न कर रहा है कि उस पर विश्वास कर रहा संचालित लगातार भावना प्रधान बना रहे क्योकि बुद्धि या विवेक का विस्तार इस दूरी को कम कर सकता है जिसका दुश्परिणाम होगा संचालक की स्वार्थ पूर्ति मे कमी। ये सभी संचालक संचालित को कर्तव्यो की प्रेरणा देते है और स्वय अधिकारो की चिन्ता करते रहते है। राजनेताओ मेतो यह स्वभाव ही बन गया है । प्रत्येक राजनेता सम्पूर्ण समाज को सिर्फ कर्तव्य की ही प्रेरणा देता रहता है किन्तु स्वय हर क्षण अपने अधिकारो के लिये संधर्श करता रहता है । इसी तरह प्रत्येक संचालक अपने अधीन संचालित को हर पल दान और त्याग की प्रेरणा देता है क्न्तु संचालक स्वय हर पल संग्रह मे लगा रहता है। दान और संग्रह का यह खेल धार्मिक क्षेत्र मे भी लगातार चलता रहता है और राजनैतिक क्षेत्र मे भी । संचालित द्वारा दान प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करने के लिये आजकल नये नये तरीके भी निकाले जा रहे है । राजनेताओ ने जन कल्याण के नाम पर नागरिक के अधिकतम धन और अधिकारो को अपने पास समेट लिया है । दूसरी ओर धार्मिक गुरूओ ने भी ट्रश्ट या ईश्वर के नाम पर अपनी आर्थिक षक्ति बहुत मजबूत कर ली है । संचालक और संचालित के बीच एक संबंध और बन रहा है कि हर संचालक संचालित को ज्ञान तो दे नही रहा सिर्फ सुविधाए दे रहा है। ज्ञान व्यक्ति को आत्म निर्भर बनाता है और सुविधा बनाती है आश्रित । राजनेता नागरिक को स्वावलम्बी बनने मे सहायक न होकर उसे ऐसी सुविधाये दे रहा है कि वह हमेंशा राज्य का मुखापेक्षी बना रहे । धार्मिक गुरू भी अपने शिश्यो को कर्मकान्ड तक ही सीमित रखना चाहते है। यही कारण है कि हर गुरू या राजनेता समाज मे विचार मंथन को निरूत्साहित करके विचार प्रचार को बढावा देता है तथा विवेक जागरण के स्थान पर लगातार भावनाओ के विस्तार के प्रयत्न भी करता रहता है क्योकि वह भली भांति समझ चुका हैकि मंथन रहित प्रचार ही उसके स्वय के विस्तार का टानिक है।

3. राजनीति और समाज सेवा का व्यवसायीकरण– दुनिया मे कही भी और कभी भी न राजनीति को व्यवसाय माना गया न समाज सेवा को । भारत मे भी ऐसा कभी नही हुआ । प्राचीन समय मे व्यवसायी यदि चाहता था तो अपना अतिरिक्त धन धर्मशाला ,कुंआ, मुफत भोजन या दानपुण्य के रूप मे समाज सेवा मे निस्वार्थ खर्च किया करता था। राजा भी यदि न्याय और सुरक्षा के बाद कुछ करना चाहता था तो वह समाज सेवा मे अपना निस्वार्थ योगदान किया करता था। तीनो का बिल्कुल पृथक पृथक कार्य क्षेत्र था। कोई किसी के कार्य मे हस्तक्षेप नही करता था। समाज सेवा पूरी तरह निस्वार्थ होने से उसे राजनीति या व्यवसाय की अपेक्षा अधिक सम्मान प्राप्त था । जब अंग्रेजो ने भारतीय व्यवस्था मे प्रवेश किया तो उन्होने व्यवसाय के माध्यम से राज्य पर कब्जा किया। इसलिये राज्य व्यवस्था और व्यापार को एक साथ जोडकर पूॅजीवाद षुरू हुआ। पूॅजीवाद मे राज्य व्यवस्था व्यवसाय के अन्तर्गत हो गई। उसके बाद कुछ देशो मे साम्यवाद आया तो उसने तानाशाही षासन की स्थापना की। अर्थात सम्पूर्ण व्यवसाय भी राज्य व्यवस्था के अधीन हो गया। चूॅकि व्यवसाय और राज्य व्यवस्था एक साथ जुड गये थे इसलिये

KASHINDIA

समाज सेवा का भी राजनीति करण हुआ। फिर भी समाज सेवा का व्यसायीकरण नही हुआ था। पिछले कुछ वर्शो से समाज सेवा का भी व्यवसायीकरण षुरू हो गया । चाहे एन. जी. ओ. के नाम से हो या किसी और नाम से किन्तु अनेक समाज सेवी संस्थाएॅ समाज सेवा को व्यापार समझ भी रही है और कर भी रही है । अब तो पता ही नही चलता कि कौन सामाजिक कार्यकर्ता गुप्त रूप से कहॉ से और कितनी मात्रा मे समाज सेवा के नाम पर धन प्राप्त कर रहा है। वह उस धन मे से बचा भी रहा है और समाज सेवक भी बनकर धूम रहा है ।कई सन्यासी का रूप धरकर इस व्यवसाय मे लिप्त है। समाज सेवा का व्यवसायीकरण भी एक गंभीर चिन्ता का विशय है।

4. भौतिक पहचान का संकट– व्यवस्था को ठीक से चलने मे कुछ निश्चित समूहो की भौतिक पहचान की भी व्यवस्था रही हैं। सम्पूर्ण विश्व मे कई रूपो मे यह व्यवस्था है जो भारत मे भी रही है। पुलिस या वकील की ड्रेस उसका एक उदाहरण है। प्राचीन समय मे गुण कर्म स्वभाव अनुसार वर्ण व्यवस्था बनाकर यज्ञोपवीत के विभिन्न रूपो मे यह पहचान बनाई गई थी । सन्यासियो के लिये भी एक विशेश वेशभूसा का प्रावधान था । विवाहित अविवाहित महिलाओ के लिये कुछ भिन्न पहचान थी। यहॉ तक कि समाज वहिश्कृत लोगो की भी अलग पहचान बनी हुई थी।

कुछ स्वार्थी तत्वो ने कर्मणा वर्ण जाति व्यवस्था को जन्मना किया। यही से व्यवस्था छिन्न भिन्न होंनी षुरू हुई । इस परिवर्तन का दुश्प्रभाव स्वाभाविक था । कुछ सन्तो ने इसे ठीक करने का प्रयास षुरू किया किन्तु कुछ राजनीतिक स्वार्थ वालो ने इसदूशित व्यवस्था का लाभ उठाने के उदेश्य से इस सुधार के प्रयत्न को विफल कर दिया। टूटती हुई जातीय पहचान जहॉ और टूटनी चाहिये थी वहा तो मजबूत होने लगी और जहा मजबूत होनी चाहीये थी वहा टूटनी षुरू हो गई ।सम्पुर्ण भारत मे पुलिस विभाग की एक निश्चित पहचान बनी हुइ है। खाखी वर्दी पर एकनिश्चित प्रकार का बेल्ट और कंधें पर निश्चित पहचान चिन्ह। सम्पूर्ण समाज मे सन्यासी की एक अलग पहचान है । उनके वस्त्रो का रगं ,उनके बाल या अन्य रहन सहन दूर से ही उनकी भौतिक पहचान करा देती है । दस बीस वर्शो पूर्व तक राजनैतिक प्रतिश्ठा की प्रतीक खादी बनी हुइ थी । आज भी कुछ मात्रा मे खादी का सम्मान बचा हुआ है । कल्पना करिये कि नक्सलवादी भी गुप्त रूप से पुलिस के समान ही ड्रेस और पहचान चिन्ह का उपयोग करने लगे या रावण भी सीताहरण के लिये साधू वेश का उपयोग करके अपना उदेश्य पुरा कर ले तब व्यवस्था का क्या स्वरूप होगा? हम आज की स्थिति की समीक्षा करे तो आतकवादी खुले आम पुलिस ड्रेस का उपयोग करने लगे है । न्यायालय मे एक विशेश प्रकार की पहचान डेस पहन कर ही वकील आंतकवादियो की कानूनी सहायता कर सकते है किन्तु आज तो ऐसे आंतकवादियो की सहायता करने वालो को काला कोट भी नही पहनना पडता। उनके लिये किसी मानवाधिकार युनिट का बोर्ड ही ऐसे आंतकवादियो की सामाजिक से लेकर कानूनी मदद के लिये पर्याप्त है । यदि ऐसा बोर्ड अंग्रेजी मे हो तो उन्हे विदेशो से आर्थिक सहायता मिलने मे आसानी होती है और समाज मे रोब जामाने मे भी सुविधा होती है । सन्यासी की पहचान भी

KASHMIRA

कठिनाई पैदा कर रही है । बडे बडे नामी सन्यासी खुले आम चुनाव लडने लगे है । कुछ सन्यासी या सन्यासिनिया तो अपनी भौतिक या राजनैतिक इच्छाओ की पूर्ति के लिये सन्यासी की पोशाक को सर्वाधिक उपयुक्त मानने लगे है । खादी का हाल तो आप देख ही रहे है । उसकी तो विश्वसनीयता अब समाप्त ही हो गई है । जैन समाज मे तो सन्यास विरूध्द आचरण पर कुछ रोक है भी अन्यथा अन्य सभी सामाजिक राजनैतिक पदो पर भौतिक पहचान लगातार खतरे मे पड रही है । कोइ पहचान समाप्त होना बडा खतरा नही । बडा खतरा यह है कि स्थापित पहचान मे नकली धुर्त प्रवेश करके लाभ उठा ले और कोइ कानून या सामाजिक व्यवस्था उसे रोकने मे सफल न हो पावे । खादी तो अपनी पहचान खो देने के कारण कोइ प्रभाव नही डाल रही किन्तु गेरूआ वस्त्र मानवधिकार संगठनो के बोर्ड या पुलिस ड्रेस तो समाज को धोखा देने मे आज भी भूमिका अदा कर ही रही है। पहचान का यह संकट सम्पूर्ण विश्व मे लगातार बढ रहा है और खतरनाक बिन्दु तक पहुॅच रहा है।

5. समाज का टूटकर वर्ग मे बदलना– समाज की अनेक परिभाशाए प्रचलित है उनमे से एक उपयुक्त परिभाशा यह है । स्वय विकसित दीर्ध कालिक नियम पालन से प्रतिबध्द व्यक्तियों का समूह। इस परिभाशा अनुसार समाज विरोधी व्यक्ति समाज का अंग नहीं माना जा सकता। समाज की मूल इकाई है व्यक्ति और व्यवस्था की पहली इकाई परिवार दूसरी गांव या वार्ड तीसरी देश चौथी विश्व हो सकती है । गांव और देश के बीच की इकाइयो को मान भी सकते है और नही भी क्योकि ये सर्वदा चलायमान होती है । समाज स्वय मे अमूर्त इकाई है। परिवार से लेकर विश्व तक की प्रत्येक इकाई अपने से उपर की इकाई की पूरक तथा नीचे वाली इकाई की संरक्षक होती है । इसका अर्थ हुआ कि हर इकाई अपने से उपर की इकाई को षक्ति देती है और नीचे की इकाई को देती है सुरक्षा की गारंटी।

अपनी इकाईयो को निश्चित सुरक्षा और न्याय के लिये समाज का एक विशेश सेल होता है जिसे राज्य कहते है। अब तक सम्पूर्ण विश्व की कोई एक राज्य व्यवस्था नही बनी है इसलिये पूरा विश्व कई सौ स्वतंत्र राज्य व्यवस्थाओ मे बटा हुआ है। इन सब राज्यो की व्यवस्थाओ मे कुछ भिन्नता तो स्वाभाविक रूप से होती ही है किन्तु ऐसे सभी राज्यो की व्यवस्थाओ मे एक समानता पाई जाती है कि राज्य सामाजिक एकता को अपनी उच्श्रृखलता के लिये बाधक समझ कर लगातार ऐसी एकता के विरूद्ध प्रयत्नशील रहता है । साम्यवादी, तानाशाह या इस्लामिक देशो मे ऐसा खतरा न के बराबर होता है क्योकि ऐसे देशो मे व्यक्ति को समाज का अग नही माना जाता ओर व्यक्ति को सिर्फ नागरिक अधिकार ही दिये जाते है मौलिक या प्राकृतिक नही। किन्तु लोकतत्र मे व्यक्ति को मानव समाज का अग मानकर उसे नागरिक अधिकार के साथ कुछ मौलिक या प्राकृतिक अधिकार भी देने की प्रथा है। इसलिये लोकतांत्रिक देशो की राज्य व्यवस्थाए सामाजिक एकता के विरूध्द ज्यादा सशंकित और सतर्क रहती है। भारत भी ऐसा ही लोकतात्रिक देश है।

समाज की एकजुटता के खतरे से बचाव के लिये राज्य दो तरीके से सक्रिय रहता है 1 समाज की प्राथमिक इकाई परिवार और ग्राम या वार्ड को हमेशा कमजोर करते जाना 2 समाज को किसी एक या एक से

KASHMINDIA

अधिक आधारो पर वर्ग निर्माण, वर्ग विद्धेश तथा वर्ग संधर्श की दिशा मे लगातार प्रोत्साहित करना। पूरा विश्व लगातार दोनो दिशाओ मे सक्रिय रहता है किन्तु भारतीय इस दिशामे बहुत अधिक सकिय है। दुनिया के किसी भी अन्य देश से अधिक । यहॉ समाज व्यवस्था की प्राथमिक इकाई परिवार और गांव को व्यवस्था मे षामिल ही नही किया गया।
भारतीय संविधान मे न कही परिवार व्यवस्था का उल्लेख किया गया है न ही ग्राम व्यवस्था का। ये दोनो षब्द ही संविधान मे षामिल नही है। इसके विपरीत समाज कों तोडने के उदेश्य से हर बात राज्य व्यवस्था मे षामिल रहती है । पूरी दुनिया मे चार प्रकार की षासन व्यवस्थाए पाई जाती है

1. पश्चिम का लोकतंत्र जिसमे व्यक्ति महत्वपूर्ण होता है तथा राज्य धर्म या समाज गौण
2. साम्यवाद जिसमे राज्य सर्वाधिक षक्ति सम्पन्न होता है तथा व्यक्ति समाज गौण
3. इस्लाम का धर्म तंत्र जिसमे धर्म सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है तथा व्यक्ति समाज गौण
4. वैदिक काल की समाज व्यवस्था जिसमे समाज सर्वशक्तिमान था तथा राज्य व्यक्ति समाज गौण।

गुलामी काल के बाद भारत का जो संविधान बना उसमे धर्म राज्य तथा व्यक्ति को तो भिन्न भिन्न स्वरूपो मे षामिल किया गया किन्तु समाज के प्रमुखअंग परिवार व्यवस्था गांव व्यवस्था को बिल्कुल दूर कर दिया गया। भारतीय संविधान ने समाज को तोडकर रखने के आठ आधारो को इस प्रकार संविधान का भाग बना दिया कि ये आठो आधार वर्ग निर्माण वर्ग विद्धेश और वर्ग संधर्श की पृश्ठ भूमि तैयार करते रहे । ये आठ आधार है
1धर्म 2 जाति 3 भाशा 4 श्रेत्रीयता 5 लिंग 6 उम्र 7 गरीब अमीर 8 उत्पादक उपभोक्ता। भारत का प्रत्येक राजनैतिक दल आठो आधारो पर वर्ग संधर्श का ताना बाना बुनते रहता है भारत की तो आज यह स्थिति हो गई हैकि यहा अनेक वर्ग ही स्वयको समाज धेाशित करने लगे है । वर्ग सधर्श ही इनकी सामाजिक एकता मान ली जाती है । ऐसी वर्ग विभाजन की स्थिति भारत मे निरंतर बढती जा रही है।

6. निश्प्रभावी राज्य व्यवस्था–समाज विरोधी तत्वो से समाज की सुरक्षा के लिये जो व्यवस्था बनाई जाती है उसे राज्य कहते है। राज्य का दायित्व होता है कि वह समाज को उसकी स्वतंत्रता की सुरक्षा की गारंटी दे। राज्य यदि ऐसा न कर सके तो यह उसकी विफलता मानी जाती हैा

राज्य का कर्तव्य है कि वह अपना नियंत्रण समाज विरोधी तत्वो तक ही सीमित करे और समाज की स्वतंत्रता पर कोई भारी अंकुश तब तक न लगावे जब तक ऐसा करना अनिवार्य न हो जावे। यदि राज्य ऐसी अनिवार्य स्थिति के न होते हुए भी समाज की स्वाभाविक स्वतंत्रता पर कोई अंकुश लगाता है तो यह राज्य की उच्श्रृखलता मानी जाती है । इसका अर्थ यह हुआ कि समाजविरोधी तत्वो पर राज्य का और राज्य पर समाज का नियंत्रण होना चाहिये । हम भारत मे समाज राज्य तथा समाज विरोघी के वास्तविक संतुलन की

KASHI INDIA

समीक्षा करे। भारत मे सम्पूर्णसमाज अपने को असुरक्षित महसूस कर रहा है। सभी प्रकार के अपराध बढते ही जा रहे है। वैसे तो सम्पूर्ण विश्व मे ही ऐसी स्थिति हो गई है किन्तु भारत मे तो हिसा आतक मिलावट बलात्कार आम बात बन गये है । समाज विरोधीतत्वो का मनोबल लगातार बढ रहा है इसके **ठीक विपरीत राज्य पर समाज का अंकुश रहा ही नही। वोट देने का अधिकार छोडकर षेश सारें अधिकार राज्य ने अपने पास समेट लिये हैं। रोज नये नये कानून बन रहे है। समाज लगभग गुलाम हो गया है। जिस राज्य को समाज के नियंत्रण मे रहना चाहिये था उस पर समाज का कोई नियंत्रण नही है। इसके विपरीत जिन समाज विरोधी तत्वो पर राज्य का नियंत्रण होना चाहीये था ऐसे ही समाज विरोधी तत्वो का ही राज्य व्यवस्था पर नियंत्रण स्थापित हो गया है।**

7. **मानव स्वभाव ताप वृद्धि–सम्पूर्ण विश्व के मानव स्वभाव मे हिसा के प्रति समर्थन बढता ही जा रहा है । यह मानव स्वभाव ताप वृद्धि लगभग सम्पूर्ण विश्व मे एक समान ही बढ रही हैा यदि पचास वर्श पूर्व यह ताप वृद्धि एक प्रतिशतप्रति दस वर्श मान ली जावे तो बीस वर्श पूर्व यह वृद्धि डेढ प्रतिशत की हो गई है और आज यह वृद्धि दो प्रतिशत प्रति दस वर्श कह सकते है**

हमारे सभी महापुरूश षान्ति का उपदेश देते रहे हैं। बुद्ध और महावीर ने तो अहिसा को सिद्धान्त ही धोशित कर रखा था। वर्तमान काल मे गांधी जी ने भी अहिसा के प्रचार मे पूरी षक्ति लगाई । आज वुद्ध महावीर और गांधी के भारत मे अशांन्ति और हिंसा का वातावरण देखने ही बनता है ।गाधी की जन्म भूमि गुजरात और कर्मभूमि महाराश्ट मे अहिसा लगातार कमजोर होरही है । प्रत्येक व्यक्ति के मन मे हिंसा के प्रति विश्वास बढा है। आमतौर पर एक कहावत दुहराई जाती है कि पहले आक्रमण विजय की सफल कुंजी होती है। हिंसा क्यो बढ रही है? मानव स्वभाव क्यो बदल रहा है? इन बातो पर हम अलग से विचार मंथन करेगे किन्तु यह बात निर्विवाद है कि मानव स्वभाव हिंसा की दिशा मे बदल रहा है । अभी दुनिया भर के समाजशास्त्री पर्यावरणीय ताप वृद्धि की चिन्ता के लिये दोहा मे बैठे थे और लम्बा विचार मंथन किये । पर्यावरणीय ताप वृद्धि का दुश्परिणाम आने मे जितना समय लगेगा उसकी अपेक्षा बहुत कम समय मे ही मानव स्वभाव ताप वृद्धि के दुश्परिणामो का खतरा मंडरा रहा है किन्तु आश्यर्य है कि इस समस्या पर गंभीर विचार मंथन के लिये कोई सम्मेलन नही हो रहा । इस स्वभाव परिवर्तन के परिणाम स्वरूप तो भाई भाई के बीच भी आक्रोश और हिसा का वातावरण बढता जा रहा है किन्तु अहिसा और षान्ति के असफल नारो के अतिरिक्त इस दिशा मे चिन्तन या प्रयत्न लगभग षून्य ही है। इसके विपरीत समाज को दो विपरीत दिशाओ मे संगठित करने का प्रयत्न लगातार जारी है जिसमे से एक है अहिंसा के नाम पर कायरता का प्रचार । दुर्भाग्य से यह प्रचार राज्य व्यवस्था को भी न्यूनतम हिंसा का पाठ पढाकर उसे कमजोर कर रहा है और ऐसे कायर या ना समझ लोग अपनी अहिंसा के समर्थन मे गांधी तक के नाम का उपयोग करते है। दूसरी ओर है संधर्श के नाम पर सामाजिक टकराव को

KASHINDIA

प्रोत्साहन ा दुर्भाग्य से यह प्रचार राज्य व्यवस्था के विरूद्ध भी समाज को हिंसा का पाठ पढाकर अपनी ही ताकत को कमजोर कर रहा है। ऐसे हिसा के समर्थक लोग ` स्वार्थ वश या ना समझी मे सुभाश और भगतसिह तक के नाम का उपयोग करते रहते है। विल्कुल साफ दिखता है कि राज्य को न्यूनतम वलप्रयोग के स्थान पर संतुलित बल प्रयोग का मार्ग अपनाना चाहिये तथा लोंकतत्र मे सामाजिक हिसा या बल प्रयोग का कोई स्थान होता ही नही। दुख है कि दो विपरीत विचार समाज मे हिसा को प्रोत्साहित करते जा रहे है।

8.मानव स्वभाव स्वार्थ वृद्धि– जिसतरह मानव स्वभाव मे आक्रोश और हिसा का विस्तार हो रहा है उसी तरह मानव स्वभाव मे स्वार्थ की मात्रा भी बढती ही जा रही है ा सभी महापुरूशो के त्याग के उपदेश और प्रवचन निश्प्रभावी हो रहे है और मानव स्वभाव स्वार्थ प्रधान होता जा रहा है। मानव स्वभाव मे स्वार्थ क्यो बढ रहा है और उसका समाधान क्या है यह समाज के सोचने का पृथक विशय है किन्तु स्वार्थ बढ रहा है यह निर्विवाद सत्य है। स्वार्थ वृद्धि ने सारे पारिवारिक समीकरण भी बिगाड दिये है और सामाजिक समीकरण भी ा पति पत्नी ,पिता पुत्र, भाई भाई मित्र मित्र के रिश्ते कलंकित हो रहे है ा आपसी अविश्वास बढ रहा है हर मामले मे स्वार्थ प्रधान व्यक्ति आगे बढ रहा है और निस्वार्थ पीछे जा रहा है। सम्पूर्ण मानव समाज के स्वभाव मे औसत स्वार्थ वृद्धि का प्रतिशत उसी तरह लगातारबढ रहा है जिस तरह हिंसा की मनोवृत्ति बढ रही है।

9. धर्म और विज्ञान के बीच बढती दूरी–धर्म और विज्ञान एक दूसरे के पूरक है। विज्ञान का आधार होता है तर्क और अनुसंधान जबकि धर्म का आधार होता है श्रद्धा और विश्वास। विज्ञान निश्कर्श निकालता है और घर्म समाज तक पहुचाता है। विज्ञान वुद्धि प्रधान कार्य है और धर्म भावना प्रधान आचरण ा विज्ञान लंगडा है और धर्म अंधा। इसीलिये दोनो को एक दूसरे का पूरक तथा सहयोगी माना जाता है।

वर्तमान समय मे धर्म और विज्ञान के बीच दूरी बढने लगी । विज्ञान आवश्यकता से अधिक भौतिकवाद की दिशा मे जाता दिख रहा है और धर्म आवश्यकता से अधिक रूढिवादी अंधविश्वास की राह पर। धार्मिक सगठन तर्क को अनावश्यक सिद्ध करने मे जी जान से जुटे है और वैज्ञानिक धार्मिक आस्थाओ पर चोट करने मे षक्ति लगा रहे हैा कुछ असत्य धारणाए यदि धातक नही है तो उसके पीछे पडने की जरूरत ही क्या है।

धर्म और विज्ञान के बीच बढती दूरी सम्पूर्ण समाज मे भ्रम पैदा कर रही है ा ऐसा भ्रम बहुत नुकसान कर रहा है ा प्रकृति के अनसुलझे रहस्यो को असत्य सिध्द करना कोई वुद्धिमानी का काम नही । किन्तु विज्ञान ऐसा कर रहा है। दूसरी ओर आस्था पर टिकी जो अवैज्ञानिक धारणाये असत्य या अनावश्यक प्रमाणित हो चुकी है उन्हे जबरदस्ती भावनात्मक प्रचार द्धारा सत्य सिद्ध करना धातक ही है। धर्म लगातार ऐसा कर रहा है।

KASHMIRA

उपरोक्त नौ आधारो पर हम कहने की स्थिति मे है कि समाज संकट मे है । यदि उपरोक्त नौ मे से कोई एक भी लक्षण दिखने लगे तो वह सम्पूर्ण समाज को अव्यवस्थित तथा बीमार करने के लिये पर्याप्त है। ऐसा लक्षण किसी गंभीर बीमारी का लक्षण मात्र ही न होकर बीमारी के विस्तार मे भी सहायक हो रहा है। किन्तु यदि हम ठीक से आकलन करे तो वर्तमान समय मे तो सभी नौ के नौ लक्षण समाज मे उपस्थित भी है और बढ भी रहे है। इसीलिये वर्तमान समय को आपात्काल सरीखा मान कर विशेश प्रयत्न की आवश्यकता है।

संकट विश्वव्यापी है। समाधान कठिन है। यदि गंभीरता से विचार करे तो समस्याएं जितनी व्यापक और प्रभाव वाली है उनके समक्ष हमारी षक्ति बहुत कम है किन्तु दूसरी ओर यह बात भी सच है कि समाधान करना ही होगा और इस समाधान मे जितना विलम्ब होगा समस्या उतनी ही बढती जायगी । इसलिये हमे इस समस्या का कोई ऐसा प्रतीकात्मक समाधान करना होगा जिसमे संगठन बनाने की आवश्यकता न हो प्रचार की भी आवश्यकता न हो, किसी व्यक्ति विशेश की विशेश पहचान भी न बनानी पडे और लोगो के बीच किसी प्रकार की विशेश सकियता की भी आवश्यकता न हो । धर्म समाज सेवा या राजनीति का चोला पहने कौन व्यक्ति हमारे बीच ,गुमराह कर रहा है ऐसी कोई पहचान जब तक नही होती तब तक उस दिशा मे बढने की आवश्यकता ही नही है। इसलिये जीवन भर के षोध और प्रयोगो के बाद मै इस नतीजे पर पहुचा हूँ कि स्वतंत्र विचार मंथन ही इस समस्या का एकमात्र समाधान है। इस के तीन षब्द है 1 स्वतंत्र 2 विचार 3 मंथन। इन तीनो षब्दो को जोडकर स्वतंत्र विचार मंथन षब्द बना है इस विधि मे स्वतत्र षब्द का आशय यह है कि प्रत्येक व्यक्ति एक इकाई होगा। वह स्वय स्वतंत्रता पूर्वक निश्कर्श निकालेगा। किसी भी रूप मे सामूहिक निर्णय या निश्कर्श नही निकलेगा । क्योकि यदि सामूहिक निश्कर्श निकालने की पंरपरा रही तो अन्तिम निश्कर्श वही निकलेगा जो नेता, पूॅजीपति, धूर्त, या बडे अपराधी चाहेगे। इसलिये विचार मंथन मे निश्कर्श व्यक्तिगत ही निकलना चाहिये। ऐसे निश्कर्श निकालने के बाद कोई कार्यक्रम करना हो तब योजना सामूहिक बन सकती है। दूसरा षब्द है विचार। विचार षब्द का अर्थ है कि इस विचार मंथन के बाद या पूर्व में किसी निश्कर्श के आधार पर तत्काल कोइ कार्य नही होगा। इसमे सिर्फ विचार ही होगा। चूकि इसमे कोई सामूहिक निश्कर्श नही निकालना है और न ही कोई सामूहिक योजना बननी है इसलिये किया तो वैसे भी इसमे षामिल नही फिर भी योजना या कार्यक्रम को विचार से दूर रखने के लिये विशेश सतर्कता रखनी होगी। तीसरा षब्द है मथंन। इस षब्द का अर्थ बिल्कुल स्पश्ट है कि निश्कर्श निकालने के लिये प्रवचन, भाशण , शिक्षा, उपदेश या अन्य किसी विधि का उपयोग नही होगा । सिर्फ विचारो का मंथन ही पर्याप्त है। इस तरह इस विधि मे अकेले या अन्य लोगो के साथ बैठकर किसी असम्बद्ध विशय पर स्वतंत्र विचार मंथन करना है। यदि मंथन करने वाले एक से अधिक हो तो भीकोइ निश्कर्श या प्रस्ताव पारित नही करना है।

KASHINDIA

यह एक अत्यत ही साधारण दिखने वाली प्रकियाहै । यह प्रयोग मासिक भी हो सकता है और साप्ताहिक भी या दैनिक भी । इस प्रयोग का परिणाम अप्रत्यक्ष और अदृश्य होता है किन्तु इसके प्रचार का प्रभाव तो अपने आप ही कम होने लगता है क्योकि विचार मंथन और विचार प्रचार एक जगह पर रह ही नही सकते। विचार मंथन गुरू शिश्य या संचालक संचालित के भेद को भी कम करता है क्योकि सब लोग समान स्तर पर बैठकर चर्चा करेगे। इससे समाज सेवा का व्यवसायीकरण भी रूकेगा ही । क्योकि प्रचार से भी यह किया प्रकिया बिल्कुल दूर है और योजना से भी । भौतिक पहचान का इसमे कोई संकट नही है । नकली लोग ऐसे मंथन से या तो दूर रहेगे या आकर फंस जायेगे। नकली लोग अन्त मे निश्कर्श भी निकालेगे और प्रस्ताव भी पारित करेगे क्योकि यही सकियता उन्हे समाज मे सम्मान जनक स्थापना मे सहायक होती है। दोनो काम इसमे है नही। निश्कर्श निकालना नही है। उनकी स्थापना होनी नही है । समाज को कोई धोखा देने का अवसर ही नही हैतो वे ऐसा बेकार का भुसा क्यो कूटे जिसमे से कोई दाना निकलने की गुंजाइस ही नही। इस स्वतंत्र विचार मंथन से सर्वाधिक लाभ होता है वर्ग निर्माण , वर्ग, विद्वेश और वर्ग संधर्श के विरूद्ध। जब समाज के सब प्रकार के लोगबिना भेद भाव के निरूद्धेश्य एक साथ बैठकर विचार मंथन करते है तो जाति धर्म भाशा क्षेत्रीयता के टकरावपूर्ण बंधन अपने आप ढीले होने लगते है। इससे राज्य और समाज के बीच की दूरी धटती है। राज्य की सार्वभौमिक षक्ति को मौन चुनौती होती है कई मामलो मे यह षक्ति राज्य के अच्छे कार्यो मे सहायक भी हो सकती है और कई गलत कार्या मे भयोत्पादक भी। इस विचार मंथन प्रकिया से हिंसा तथा स्वार्थ की प्रवृत्ति का भी अपने आप षमन होता है। साथ ही यह योजना धर्म और विज्ञान के बीच की बढती दूरी भी कम कर सकती है । मुझे तो लगता है कि इन सभी समस्याओ का यह एकमात्र अच्छा समाधान है क्योकि यह विध्वंसक परिणामो पर नियंत्रण के साथ साथ सार्थक परिणाम भी देता है । इससे प्रत्येक व्यक्ति का विवेक जागृत होता है तथा आत्मस्वाभिमान भी मजबूत होता है और इन दोनो का जागरण व्यक्ति के चरित्र पर व्यापक प्रभाव डाल सकता है।

मै जानता हू कि समस्याओ की विकरालता को देखते हुए इस समाधान की सार्थकता पर विश्वास नही होता है।सच भी है कि क्या विशालकाय हाथी और चींटी के बीच कोइ तुलना संभव है। ऐसे तर्क मे तब तक दम है जब तक हम इन विशालकाय समस्याओ से प्रत्यक्ष टकराव की योजना बनाते हो। हम कही भी टकराने की तो पहल कर ही नही रहे हम तो सिर्फ निरूद्धेश्य स्वतत्र विचार मंथन कर रहे है जिसमे कोइ टकराव षून्य है और परिणाम प्रभावकारी है। अपने सत्तर वर्शो के जीवन मे पचपन वर्श मैने विचार मंथन मे बिताये। प्रारंभिक दस पद्रह वर्श तो विचार मंथन अव्यवस्थित रहा किन्तु पिछले करीब चालीस वर्शो से यह प्रकिया रामानुजगज षहर मे व्यवस्थित चल रही है। इस प्रकिया से कोइ लाभ होगा ऐसा विश्वास वहा के आम लोगो को कभी नही रहा। किन्तु रामानुजगंज षहर को चमत्कारिक लाभ हुआ है यह वहा के आम लोग महसूस भी करते है और व्यक्त भी करते है। फर्क सिर्फ यही है कि वहा के लोग उस षहर मे दिख रहे वैचारिक परिर्वतन का

KASHINDIA

क्षेय मुझे देते है जबकि सच्चाई यह है कि इन सबका क्षेय इस स्वतंत्र विचार मंथन प्रकिया को है मुझे नही। सच्चाई तो इससे भी आगे बढकर यह है कि आज तक मुझमे जो विलक्षण प्रतिभा का विकास हुआ है उस का भी अधिकांश श्रेय इस विचार मंथन प्रकिया को ही है। मेरा तो सिर्फ इतना ही योगदान है कि मैं इस प्रकिया को प्रारभ करने का माध्यम बना और रामानुजगज के लोग न समझते हुये भी आपसी सम्बन्धो के आधार पर इससे जुडे रहे। चालीस पचास वर्शो के निरर्थक विचार मंथन ने जो प्रयोग करके सफलता पाई हैवह दूसरो कोआश्वस्त और विश्वस्त करने के लिये पर्याप्त होनी चाहिये। इस विचार मंथन के माध्यम से मै आपको मानसिक व्यायाम की सलाह दे रहा हू। आज तक दुनिया मे षारीरिक व्यायाम के मार्ग बताये गये है । बाबा रामदेव जी ने तो इस दिशा मे क्रान्ति ही की है। इसका लाभ भी हुआ हीहै । किन्तु अब तक मानसिक व्यायाम की कोई सरल विधि विकसित नही हो पाई है। बिना मानसिक व्यायामके षान्ति संभव नही है क्योकि दूसरो द्वारा दिये गये प्रवचन उपदेश समाधान कम और विकृति ज्यादा पैदा कर रहे है। इसलिये वर्तमान परिस्थितियो मे यही मार्ग दिखता है।

इस व्यायाम का सबसे बडा लाभ यह है कि आपके व्यावहारिक जीवन मे कोइ अन्य आपको आसानी से न धोखा दे पायेगा न ही ठग पायेगा। आपमे स्वय मे नीरक्षीर विवेक की षक्ति विकसित होगी । दूसरी बात यह है कि आपका स्वय का आत्मस्वाभिमान भी जागेगा ओर स्वावलम्बन भी । और ये दोनो आपको मानसिक सेतोश और षान्ति देगे।

इस व्यायाम की सबसे बडी समस्या यह है कि इससे होने वाले लाभ का अनुभव स्वय को या तो कभी नही होता या बहुत बाद मे होता है किन्तु यह बिल्कूल निश्चित है कि आपके पडोसी मित्र या परिवार वाले आपके व्यवहार तथा मानसिक विकास मे गुणात्मक परिवर्तन अनुभव करेगे । आपका मन ऐसे व्यायाम की ओर आकर्शित भले ही नही होगा किन्तु इस मानसिक व्यायाम से बहुत लाभ होना है । इसलिये आपको यह व्यायाम करना ही चाहिये।

पाक्षिक पत्रिका ज्ञानतत्व आपको ऐसे मानसिक व्यायाम मे आंशिक सहायता कर सकती है । इसका पूर्वार्ध मानसिक व्यायाम केलिये समर्पित रहता है। आप स्वय, परिवार के लोगो तथा मित्रो मे इसके पढने की आदत डालिये। किन्तु ज्ञानतत्व आपके मानसिक व्यायाम मे सहायक ही हो सकता है मौलिक नही मौलिक तो आपका स्वय का व्यायाम ही होगा।

मै तो सिर्फ यही कहना चाहता हू कि चरित्र निमार्ण की अन्य सारी प्रकियाएॅ या शिक्षाये या तो असफल होगी या धातक क्योकि जब तक चरित्र निर्माण का उपदेश देने वाले का स्वय का चरित्र ही ठीक नही है तब तक सब बेकार है और ऐसा चरित्र कितना ढोगी है पेशेवर है यही पता नही। इसलिये अब सामाजिक आपात्काल समझ कर स्वावलम्बी प्रकिया की आवश्यकता है। आशा है कि ऐसे प्रयोग का निश्चित लाभ हमे होगा और यदि इसका लाभ सम्पूर्ण समाज को न भी मिले तो स्वयं को व्यक्तिगत स्तर पर तो होना निश्चित ही है ।

KASHI INDIA

KAASH INDIA